अध्याय-3

गठबंधन की राजनीति पर कांशीराम के विचार

कांशीराम महान पुरुषों में से एक थे, जिनका जन्म पंजाब प्रान्त के रोपड़ जिले के ख्वासपुर नामक गांव में 15 मार्च 1934 ई॰ को हुआ था। इनकी माता विशन कौर और पिता हरि सिंह, यह मूलत: जाटव जाति से धर्म परिवर्तन करके सिख धर्म को अपना लिया था। कांशीराम अपने परिवार में तीन भाई और चार बहनों, में अकेले थे, जिन्होंने स्नातक कर रखा था। कुछ समय तक यह रोपड़ जिले में सरकारी नौकरी करते रहें और वहाँ से हट कर इन्होंने पुणे के पास फिरंकी पहुँचे, जहाँ इनका गोला बारूद की फैक्टरी में लैबेरेट्रीयन असिस्टेंट की नौकरी मिल गयी। लेकिन वहां एक घटना को देखकर नौकरी छोड़ दी उसके बाद वह दलित आन्दोलन में निकल पड़े जिनका लक्ष्य दलितों की मुक्ति के लिये अधिकार प्राप्त करना बन गया।

कांशीराम दलितों को अन्य पिछड़ी जातियों के साथ मिलाकर देखते हैं, वह कहते हैं कि सवर्ण हिन्दुओं की संख्या 15 प्रतिशत होने पर भी 85 प्रतिशत वर्ग पर अपनी हुकूमत जमाये बैठे हैं। वह दलित व अन्य पिछड़ी जातियों के आधार को मजबूत करने की कोशिश करते हुये उन्होंने सवर्ण हिन्दुओं के प्रति संघर्ष करके सत्ता प्राप्त करने की मुहिम चलाई। यह सवर्ण हिन्दुओं के प्रति संघर्ष की भावना फूले के समय से चली आ रही है। कांशीराम का संघर्ष आर्य जाति एवं यहाँ के मूल निवासियों के बीच था। इन मूल निवासियों ने प्राचीन सभ्यता का निर्माण किया था। उनकी सभ्यता महान सभ्यता थी। इन आर्य लोगों ने यहाँ के मूल निवासियों के बीच षड्यंत्र रचकर उनको आपस में बाँट रखा था। मूल निवासी की अस्मिता उच्च परिस्थिति एवं उच्च सभ्यता की प्रतीक रही है। यह एक विशेष जाति की अस्मिता नहीं है बल्कि यह एक बहुजनों की अस्मिता है और इसका स्वरूप अखिल भारतीय है। यह सामाजिक उच्च प्रस्थिति और राजनीतिक शक्ति की आकांक्षा का प्रतीक है यह मिथ बहुजनों में सामाजिक रूपांतरण के संघर्ष में उत्साह करने का उपकरण है।

कांशीराम अपने सिद्धान्त के निरूपण में अपना लाभ देखते हैं। इसके कारण यहाँ के

मूल निवासियों में जो सवर्ण हिन्दुओं के प्रति अनेक घृणाएँ, शंकाएँ, भय और वर्ग विरोध है जिसके कारण वे सब एक स्थान पर केन्द्रित होकर बहुजनों का गठबंधन तैयार करके सत्ता प्राप्त करने की रणनीति बना रहे हैं। जिससे उस कार्य में वह एक मनोवैज्ञानिक उपाय का सहारा ले हैं।

इस सिद्धान्त के आधार पर वह आसानी से दलित व अन्य पिछड़े वर्गों के साथ अल्पसंख्य वर्ग को संगठित करके सत्ता प्राप्त करने की मुहीम तैयार कर रहे है। इसके कारण कांशीराम का यह सिद्धान्त भावनात्मक दिखाई देता है, ये भावनाएँ अनार्य भारत के मूल निवासी है। वे शासक थे आज वे शासित है, उनका शासन उन्हें दो। उनका शोषण बंद करो। कांशीराम के आन्दोलन के पीछे उनकी भावनाओं की शक्ति छीपी हुई है। इस आन्दोलन की मान्यता यह है कि संगठित शक्ति के माध्यम से राजनैतिक गठबंधन बनाकर सवर्ण हिन्दुओं को सत्ता से हटाने के लिये बाध्य किया जा सकता है। इन वर्गों के प्रति भेदभाव को खत्म किया जा सकता है यह कार्य दलित व अन्य पिछड़े वर्गों के साथ-साथ अल्पसंख्यकों का गठबंधन तैयार करके ही किया जा सकता है।[1]

कांशीराम एक हटकर्मी दलित आन्दोलन के कार्यकर्ता व संगठनकर्ता थे जिन्होंने सातवें-आठवें दशक में ही दलित राजनीति को एक सूत्र में बांधने का अथक प्रसास किया। जिसके कारण उन्होंने जाति चेतना का राजनीतिकरण करके सवर्णो की स्थिति को कमजोर बना दिया। जिस समय कांशीराम ने राजनीति में पैर रखा, उस समय दलित राजनीति डामाडोल थी। वह दलित वर्ग आर्थिक रूप से शोषित व सामाजिक और राजनैतिक रूप से अभागा था इस वर्ग को एक दूसरे के प्रति सहयोग की जरूरत थी। इस वर्ग को अपने राजनैतिक व सामाजिक, आर्थिक, अधिकारों के प्रति जाग्रत करके, अपने मिशन को आगे बढ़ाते हुए वह कहते है कि 85 प्रतिशत दलितों पर 15 प्रतिशत ब्राह्मण वर्ग शासन करता आया है, इस फार्मूला को लेकर

---

[1] अभय कुमार दुबे, *आज के नेता/आलोचनात्मक अध्ययन माला :* कांशीराम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997, पृ. 46.

कांशीराम ने अन्य वर्गो को एक सूत्र में बाधने की कोशिश की।[2]

कांशीराम नौकरी से त्याग-पत्र देने के बाद वह रिपब्लिकन पार्टी में शामिल हो गये क्योंकि इस पार्टी के 'शेडयूल्ड कास्ट फेडरेशन' से ऐतिहासिक संबंध थे लेकिन यह पार्टी महाराष्ट्र तक ही सीमित होने के साथ-साथ बौद्ध महार की पार्टी बनी रही। इस पार्टी के अन्दर अनेक गुटबंदियाँ थी जिससे यह एक संघर्षशील पार्टी बन चुकी थी। कांशीराम जिस मिशन को लेकर इस पार्टी में शामिल हुये थे उस मिशन से उनको कोई लाभ दिखाई नहीं दिया। जिसके कारण उन्होंने पार्टी से अलग मार्ग अपनाने का कार्य किया। कांशीराम को अब दलितों को संगठित करने का एक ही मार्ग दिखाई दे रहा था। वह अम्बेडकर के आर्दशों पर चल कर, इस मिशन को आगे बढ़ाया जाये। उन्होंने अम्बेडकर के तीन सिद्धान्त- शिक्षित बनों, आन्दोलन करो और संगठित रहो, इसको औपचारिक रूप से अपना कर उन्होने प्रेरणा फुले के बहुजन समाज से प्राप्त की।[3]

अम्बेडकर के मिशन ने वर्ग व्यवस्था के जातिगत आधार को अनेक आन्दोलनों और संघर्षो के द्वारा इनको खारिज कर दिया था उसके बाजजूद कांशीराम ने इस वर्ग व्याख्या को बदल कर फुले के सिद्धान्तों को अपनाते हुये उनका विचार था कि वह मुठ्ठी भर आर्य विदेशी आक्रमणकारी, जो देश की 85 प्रतिशत दलित समाज पर अपनी सत्ता थोपे बैठे है यह बडे दु:ख की बात है। इसके साथ-साथ कांशीराम ने अपने श्रोताओं को उत्साहित करते हुये उन्होंने जातिगत अभियान में संख्या के साथ-साथ तर्क का भी इस्तेमाल किया[4] उनका विचार था कि बहुजन समाज की संख्या 85 प्रतिशत होने पर भी, सत्ता प्राप्त नहीं कर सकते यह बड़े दु:ख की बात है 15 प्रतिशत आर्य लोग 85 प्रतिशत लोगो पर अपना अधिकार जमाये बैठे है। ये आर्य वर्ग दलितों का शोषण सदियों से करते हुए आये है जिसके कारण कोई भी आर्य हमारी विजय को पसंद नहीं करेगा। इसलिए एक गठबंधन बनाकर सत्ता प्राप्त करने की मुहीम तैयार करते है।

---

2 अजय बोस, *''बहनजी'' एक राजनैतिक जीवनी,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 33

3 विनोद अग्निहोत्री, *कांशीराम और उनकी बसपा, हरिजन से दलित,* शेज प्रकाशन, दिल्ली, 2005, पृ. 79-80

4 अभय कुमार दुबे, Op.cit.,(1), p. 51.

वामसेफ

कांशीराम ने वामसेफ की स्थापना अम्बेडकर के परिनिर्माण दिवस के (6 दिसम्बर 1956) अवसर पर की। इस संगठन का उद्देश्य न केवल कर्मचारी वर्गों को संगठित करके अपनी मांग व अधिकारों के प्रति जागरूक करना ही नहीं था बल्कि उन्हें अपने समाज के प्रति उनको अपने दायित्वों से अवगत करना भी था। यह संगठन पूर्ण रूप से कर्मचारियों का एक गैर राजनैतिक संगठन है यह सरकारी कर्मचारियों की एक संस्था है जिसके कार्यकर्ता राजनीति में कोई सक्रिय भागीदारी नहीं लेते, मूलत: वे सिविल सर्विसेज कंडक्ट रूल्स के तहत ही कार्य करते है वामसेफ के गठन से कांशीराम अपनी भावी योजना को क्रियान्वित करने के लिये उन्हे एक मजबूत आधार प्राप्त हुआ। इसी संगठन से दलित शोषित समाज का राजनीतिक आधार मजबूत हुआ।[5]

वामसेफ के अन्दर पे बैंक टू सोसाइटी के माध्यम से कांशीराम ने अपने मिशन में उच्च से निम्न वर्ग के कर्मचारियों को शामिल किया, जिससे वे आर्थिक सहायता के साथ-साथ वे एक वोट बैंक भी तैयार कर रहे थे। पे बैक टू सोसाइटी की अवधारणा ही वामसेफ के सदस्यों व कर्मचारियों को बसपा की तरफ खीचती, जिससे बसपा का मत बैंक बढ़ने लगा और वामसेफ के कार्यकर्ता दलित व अन्य पिछड़े वर्गों के वोटो को सही इस्तेमाल करने की जानकारी देते रहते थे।[6] एक वर्ग को दूसरे वर्ग के साथ जोड़ने का प्रयास भी किया जाता था, जिससे वामसेफ का इतिहास दलित वोट बैंक प्राप्त करने के साथ-साथ अन्य पिछड़े वर्गों को जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने लगा।

काशीराम ने सन 1972 से 1980 के बीच सामाजिक परिवर्तन व दलित व अन्य पिछड़े वर्गों के अधिकारों के प्रति, जाग्रीत करने के लिए उन्होंने वामसेफ के माध्यम से इन्हें जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे एक नई राजनैतिक ऊर्जा पैदा होने लगी। कांशीराम ने अम्बेडकर के मिशन को पुन:जीवित करके, इस मिशन को नई रोशनी दी, जिसके लिये उन्होंने

---

5 सतनाम सिंह, *बहुजन नायक कांशीराम,* सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 30.

6 Ibid., p.31.

सरकारी कर्मचारियों व सक्रिय, निष्क्रिय सामाजिक संगठनों एवं कार्यकर्ताओं के माध्यम से दलित मिशन को एकत्रित करने में एक महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस संगठन को एकत्रित होने से दलित-शोषित नेतृत्व में हलचल पैदा हो गयी। जिससे इस संगठन में सरकारी कर्मचारियों व स्वतंत्र रूप से छोटे-मोटे व्यवसायों में कार्यरत लोगो ने उनकी तन-मन-धन से भरपूर सहायता की। इसी कारण यह संगठन पूरे भारत में फैल गया।[7]

वामसेफ के बनने के पीछे छीपी धारणा

काशीराम वामसेफ को बनाने के पीछे अपनी एक रणनीति बताते हैं कि– "समाज को वापस देना। अर्थात यह बसपा के लिए दिमाग, प्रतिभा और कोष जुटाता है। लेकिन 1985 में मैंने इसे छाया संगठन में बदल दिया। अब इसका सार तत्व केवल मेरी निगाह में है और केवल मैं ही इसका पदाधिकारी और सदस्य रह गया हूँ। देश के करीब चार सौ सर्वोच्च सिविल सर्वेट बसपा के ब्रेन बैक है। बामसेफ के 26 लाख अनुसूचित जाति-जनजाति के कर्मचारी व कार्यकर्ता सारे देश में फैले हुए हैं। उनकी शुद्ध आय दस करोड़ सालाना है। वे बसपा को कोष सप्लाई करते हैं। आखिरकार बसपा का मासिक खर्चा एक करोड़ रुपए हैं।"[8]

कांशीराम के कथन से दो बातें स्पष्ट होती है कि आरक्षण के द्वारा नौकरी पाए कर्मचारियों की इस आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका है और उन पर कांशीराम की पकड़ मजबूत है। 1984 में बसपा की स्थापना के बाद कांशीराम ने बामसेफ को पूरी तरह पृष्ठभूमि में धकेल दिया। यह संगठन लगभग आँखों से तो ओझल हो गया लेकिन इसका बजूद नहीं मिटा। इन्हीं बामसेफ के लोगों की बसपा में अहम भूमिका रही है जैसे कि मायावती, और राज बहादुर बामसेफ से ही निकले। बसपा के चुनावों दफ्तरों का संचालन हो या चुनाव में खर्च होने वाले पैसे का लेखा-जोखा हों, इन सब कार्यो पर बामसेफ के लोग का ही नियंत्रण है। स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार चुनावी रणनीति निर्धारित करने का काम भी बामसेफ के हाथ में चला गया।

---

7 आर. चन्द्रा, कन्हैया लाल चंचरीक, *आधुनिक भारत का दलित आन्दोलन,* यूनिवर्सिटी, पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2003, पृ. 362.

8 *संडे आब्जर्वर,* 12 अग्रस्त 1990.

बामसेफ के कई संस्थापक सदस्य बसपा के जरिए अपनी बढ़ती हुई। राजनीतिक भूमिका से रोमांचित भी हुए लेकिन कुछ के मन में शंकाएँ भी पनपी। दूसरी ओर सीधे-सीधे बसपा में आए पूर्णत: राजनीतिकृत नेताओं और कार्यकर्ताओ ने इस अपंजीकृत छाया संगठन की पार्टी पर चौधराहट को नाराजगी से देखा।

एक ओर देखा जाये तो वामसेफ से बसपा का जन्म हुआ था। दूसरी ओर अंतर्विरोध की बुनियाद भी यही से पड़ी थी। शुरु में ये अंतर्विरोध मित्रतापूर्ण रहे लेकिन बाद में उन्होंने नुकसानदेह स्वरूप भी अख्तियार करना शुरु कर दिया। बसपा वालों का आरोप था कि बामसेफ वालो को फील्ड का अनुभव नहीं होता और जब उन्हें इस बारे में जानकारी दी जाती थी तब वे इस पर ध्यान नहीं देते। बसपा वालों ने कई बार कांशीराम द्वारा बामसेफ के सलाह मशविरे पर ज्यादा ध्यान देने की शिकायत की।[9]

बसपा का और ज्यादा विकास होने पर नब्बे का दशक आते-आते बामसेफ की भूमिका उत्तरोत्तर अदृश्य सी होती चली गई। जिससे इन परिस्थितियों ने बामसेफ के अंदर उसकी भूमिका पर भी बहस पैदा कर दी। इसके कुछ संस्थापक सदस्यों का विचार था कि उत्पीड़ित वर्ग को ऐसे बौद्धिकों की जरूरत है जो उनको सामाजिक-आर्थिक न्याय दिला सके। इस लक्ष्य की प्राप्ति बामसेफ से जुड़े सदस्यों द्वारा ही संभव है। जबकि कांशीराम इस जिम्मेदारी को बसपा को देना चाहते थे। इस बहस के कारण कांशीराम का कुछ नेतृत्व विवादास्पद हो गया। किसी समय बामसेफ के सदस्यों के बीच विवादों के निपटारे के लिये कांशीराम मुखिया का काम करते थे। लेकिन इस बार वे खुद ही इस विवाद में फंस गये। कुछ संस्थापक सदस्यों ने एक-एक बैठक बुला कर कांशीराम को अध्यक्ष पद से हटाने की घोषणा की। इसके कारण दो बामसेफ बन गये। एक कांशीराम का बामसेफ और दूसरा उनका विरोधी। कांशीराम वाले बामसेफ ने नये बामसेफ पर आरोप लगाये कि उन्होंने पैसे के हिसाब किताब में गोल माल किया लेकिन यह आरोप एक हथकंडा था असली विवाद संगठन को लेकर ही था। परन्तु नया बामसेफ पुराने बामसेफ को कोई चुनौती नहीं दे सका। और उसने मुसलमानों के अयोध्या मार्च

---

[9] आर. के. सिंह, *कांशीराम और बी.एस.पी,* कुशवाहा बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, इलाहाबाद, 1996, पृ. 90.

में भाग तो अवश्य लिया था लेकिन उसका आधार पश्चिमी उत्तर प्रदेश के कुछ ही जिलों तक सीमित होकर रह गया। बसपा और वामसेफ के बीच अंतर्विरोध की आवाज 1981 से ही मिलनी शुरु हो गयी थी। बामसेफ छीपा हुआ राजनीतिक संगठन था। इसी कारण 1981 में कांशीराम ने डी.एस.4 नामक खुला संगठन बनाया जो बसपा का पूर्वाभ्यास था।[10] जिसने बामसेफ के अधूरे कार्य को पूरा किया।

दलित, शोषित, समाज संघर्ष समिति (डी॰एस॰फोर॰)

कांशीराम दलित व अन्य पिछड़े वर्गो के कर्मचारियों का संगठन बनाने के बाद अब सामज के अन्य लोगों के लिए भी एक संगठन खड़ा करने की एक योजना बनायी। क्योंकि सरकारी कर्मचारी वर्ग तीव्र आन्दोलन नहीं कर सकते थे। इसी समस्या को ध्यान में रखते हुये डी॰एस॰फोर॰ का गठन 6 दिसम्बर 1981 को किया। इस संगठन के नाम से चार बार एस॰ आने से इसका नाम ही डी॰एस॰फोर॰ रखा गया। इस संगठन के माध्यम से वह निम्न वर्गो (जन-सामान्य) की झोपड़ियों तक आन्दोलन को पहुँचाया जा सका, जिसके कारण वह वर्ग इस संगठन की ओर आकर्षित होने लगा, उसके बाद शीघ्र ही यह आन्दोलन पंजाब, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उड़ीसा इत्यादि राज्यों में अपनी पकड़ मजबूत करने लगा। इस आन्दोलन के माध्यम से कांशीराम ने एक दूसरे वर्गो को जोड़ने का अथक प्रयास किया।[11]

कांशीराम ने साईकिल रैलियों के द्वारा यह दिखा दिया। कि यह वर्ग शोषित व श्रामिक है। इसके पास बड़े वाहन रखने की क्षमता नहीं है इसलिए साईकिल इसकी पहचान है। इन रैलियों के द्वारा कांशीराम ने पूरे देश में तहलका मचा दिया जिससे बिखरे हुये वर्गो को एकत्रित करने में उन्हें ज्यादा समय नहीं लगा जिन्होंने इन रैलियों से दिल्ली व उसके आसपास के राज्यों में तहलका मचा दिया। जिससे इन वर्गों के अन्दर उत्साह पैदा होने लगा जिसके कारण यह वर्ग

---

10 अभय कुमार दुबे, Op.cit.,(1), p. 52.

11 सतनाम सिंह, Op.cit., (5), p. 34.

एक दूसरे के साथ जुड़ते चले गये, और धीरे–धीरे यह आन्दोलन मजबूत होता गया।[12]

कांशीराम का राजनीतिक रिश्ता उस वर्ग से था जो सामाजिक भेदभाव व आर्थिक शोषण के शिकार थे, जिनकी समस्या को जानबूझकर वामपंथियों से दूर रखा क्योंकि इन वर्गों को हमेशा आगे करके उच्च वर्ग ने लाभ उठाया। इसके साथ ही मान सम्मान एवं पद चेष्टा के लिए इस वर्ग को हमेशा पीछे रखा गया और इनका शोषण के शिवाय कुछ नहीं हो सका। कांशीराम इस बात से परिचित थे कि सामाजिक क्रान्ति के द्वारा इस वर्ग को राजनैतिक अधिकारों के प्रति जाग्रत किया जा सकता है। यह शोषित वर्ग अन्य वर्गों के साथ मिलकर सत्ता प्राप्त कर सकता है। सत्ता प्राप्त करके ही यह वर्ग अपना विकास कर सकता है अन्यथा नहीं क्योंकि हमेशा इनको उच्च वर्ग ने उनके अपने अधिकारों से वंचित करके रखा है यह वर्ग सत्ता प्राप्त करके ही अधिकार प्राप्त कर सकता है।[13]

उत्तर प्रदेश में वामसेफ डी॰एस॰फोर॰ के द्वारा कांशीराम ने दलित व अन्य पिछड़ी जातियों को जाग्रत करने में कोई कमी न छोड़ी, जिससे उनको उत्तर प्रदेश में कुर्मी व अन्य पिछड़ी जातियों को अपनी ओर आकर्षित करने में सफलता प्राप्त हुई और यह वर्ग आर्थिक रूप से सम्पन्न था जिससे कांशीराम की राजनैतिक संगठन बनाने की लालसा और तेज होती गयी क्योंकि यह वर्ग निर्वाध रूप से सामाजिक आन्दोलन चलाने में सामर्थ्य दे रहा था जिसके कारण यह आन्दोलन मजबूत होता जा रहा था। अब कांशीराम को यही दिखाई दे रहा था कि एक राजनैतिक संगठन बनाकर, उस संगठन से राजनैतिक शक्ति प्राप्त की जा सकती है। इसलिए सत्ता पर कब्जा करने का रास्ता आसान होता जा रहा था क्योंकि उत्तर भारत में कांग्रेस पार्टी का दलित और अल्पसंख्यक वोट बैंक एक सीमा तक ध्वस्त होता दिखाई दे रहा था इसी से उन्होंने यह अन्दाजा लगा लिया कि केन्द्र में कांग्रेस की अभूतपूर्व हार से तरह–तरह की राजनैतिक जोड़–तोड़ की असीम सम्भावना पैदा हो सकती है।[14]

कांशीराम की पृष्ठभूमि प्रादेशिक ही रही और उनके ऊपर किसी प्रकार का राजनैतिक संरक्षण नहीं था। इसके बावजूद भी कांशीराम में ऊंचा सोचने की अद्‌भूत क्षमता थी जो कि

---

12 अभय कुमार दुबे,Op.cit., (1), p. 63.

13 Ibid., p. 43.

14 Ibid., p. 44.

कांशीराम के आन्दोलन ने राष्ट्र के क्षितिज पर अपनी अलग पहचान बनायी तभी उन्होंने दलित जातियों और गुटों के ऐसे राष्ट्रव्यापी गठजोड़ का सपना देखने का साहस किया जिससे सत्ता पर कब्जा किया जा सके।[15]

कांशीराम ने हर समस्या का हल दीर्घकालीन राजनैतिक गतिविधियों के रूप में सुलझाया। वामसेफ और डी॰एस॰फोर॰ के लोगों ने उनको इतना उत्साहित कर दिया कि अब एक राजनैतिक पार्टी का गठन करना अति-आवश्यक था क्योंकि सभी राजनैतिक पार्टियों पर कब्जा उच्च जातियों का था जिससे समाज में उनकी सत्ता मजबूत थी। यह कैसी विडंबना बनी हुई थी, जो 85 प्रतिशत दलित वर्ग शोषित है जबकि 15 प्रतिशत वर्ग शोषक बना हुआ है। इसलिए इस बात की जरुरत अवश्य समझी जा सकती है कि हमारी एक राजनैतिक पार्टी अवश्य होनी चाहिये। परन्तु अतीत में ऐसे प्रयास किये जा चुके है लेकिन वह सफल नहीं हो सके। अब एक ऐसी पार्टी का गठन किया जाये जिससे की चमचा युग को खत्म किया जा सके।[16]

कांशीराम को पंजाब और उत्तर प्रदेश में भविष्य अधिक उत्साहवर्धक लगता दिखाई दे रहा था। उस समय पंजाब में अनुसूचित जातियों का प्रतिशत देश में सबसे अधिक था। जिससे कांशीराम ने वहाँ के मूल निवासीयों की वापसी की भूमिका अदा की। उनको बहुत कम समय में पंजाब के अन्दर वामसेफ की स्थापना करने में सफलता मिलती जा रही थी। सिक्ख पन्थ के द्वारा पैदा की गई रूकावटों के बाजजूद दलित सिख उनकी तरफ खीचते दिखाई दिये। इसके साथ मध्य प्रदेश, राजस्थान और उड़ीसा से भी लोग उनकी तरफ खीचते चले गये।

उत्तर प्रदेश मे अनुसूचित जाति की विशाल आबादी थी यह राज्य दलित वर्ग की राजनीति के लिये सबसे ज्यादा जागरूक था क्योकि कांशीराम को विश्वास हो गया था कि उनके आन्दोलन की चरम सफलता की कुंजी उत्तर प्रदेश के हाथो में है उन्हें कुर्मी व अन्य पिछड़ी जातियों का भी सर्मथन प्राप्त होता जा रहा था जिसके कारण इस बिखरे हुये वर्ग को

---

15 Ibid., p. 47.

16 एस.एल. दुसाध, *उत्तर प्रदेश में बसपा की सफलता : सोशल इंजीनियरिंग का कमाल या कुछ और एक चुनावी अध्ययन,* उत्तर प्रदेश, 2008, पृ. 394.

जोड़ने में भी सफलता मिलती जा रही थी।[17] अब कांशीराम को एक राजनैतिक पार्टी बनाना अवश्य दिखाई दे रह था जिसके कारण यह आन्दोलन अम्बेडकर के मिशन को पुन:जीवित कर सके।

बहुजन समाज पार्टी की विचारधारा

बसपा की विचारधारा पालि साहित्य के अनुसार बुद्ध का समस्त चिन्तन ''बहुजन हिताय: बहुजन सुखाय'' में विश्वास करता है और उनके समस्त सामाजिक मंगल की उदस्त भावना से परिपूरित है। मज्झिम निकाय में धार्मिक क्रियाकलाप लोग बहुजनस्या, शब्द बहुजन समाज के लिये प्रयुक्त हुआ है और चूलसारोपम सुत्त में आया है, और गौतम बुद्ध से प्रश्न किया गया कि मगध परिक्षेत्र में उनके अतिरिक्त वैदिक कर्मकाण्ड विरोधी सामाजिक चिन्तक और धर्माचार्यो में, वे कौन संघी, गणी, गणाचार्य प्रसिगधा यशस्वी और तीर्थकर है, जिन्हें बहुजनस्सा प्रतिष्ठा प्रदान करते हैं तो बुद्ध उत्तर में कहते हैं कि वे आचार्य पूरन कास्यप, मक्खनी गोसाल, अजित केश कंवली, पशुध, महावीर स्वामी, जिन्होंने पांच हजार साल पहले ही सामन्ती दासता, कर्मकाण्ड, अविश्वास जाति व्यवस्था वर्गभेद की बेड़ियों से मुक्ति व समता, स्वतन्त्रता व बन्धुत्व और न्याय की आधारशिला पर जाति विहीन, वर्ग विहीन, समाज की संरचना को अपना एक उद्देश्य बनाया था। इसकी उद्घोषणा गौतम बुद्ध ने भी की थी। जिसको आगे चलकर अम्बेडकर ने अपने जीवन का मूल मन्त्र माना। उसी को कांशीराम ने एक सामाजिक दर्शन का रूप दिया। जिसको मायावती ने आगे बढ़ाया। इसलिए बहुजन समाज की लोकतन्त्र में अहमियत और अधिक बढ़ गयी।[18] जिससे देश का 85 प्रतिशत समाज गरीबी, अज्ञानता और अपने अधिकारों से वंचित न रह सके और सत्ता-विमुख न रहे। प्रजातान्त्रिक संगठनों और प्रजातन्त्र के सभी लाभों से अलग-थलग न रह सके, जिसके कारण वह देश की मूल आर्थिक, सामाजिक विकासधारा से न कट सके। इसी बहुजन समाज पर अपनी कड़ी निगाह रखनी है। यही मायावती का संदेश है इसी स्वप्न को साकार करने के लिये उन्होंने 14 अप्रैल, 1984 को बहुजन समाज पार्टी की

---

17 सतनाम सिंह, Op.cit., (4), p. 44.

18 बसपा के अभिलेख।

स्थापना की। आज वह अखिल भारतीय स्तर की पार्टी बन चुकी है।

बसपा की विचारधारा को परिभाषित करते हुये मायावती ने स्वयं लिखा है कि बहुजन समाज का तात्पर्य अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग एवं धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय से सम्बन्धित लोगों से है। जनसंख्या के हिसाब से इनको देखा जाये तो वह 85 प्रतिशत है और शेष 15 प्रतिशत मनुवादी समुदाय के नाम से जाना जाता है। लेकिन सबसे बड़े दुख की बात यह है कि ये 15 प्रातिशत मनुवादी समाज के लोग साम, दाम, दण्ड, भेद का इस्तेमाल करके जाति के आधार पर इस समाज को हजारों टुकड़ों में बॉट कर बहुजन समाज को अल्पजन समाज बना दिया है। जिस कारण मनुवादी समाज ने जाति शब्द का निर्माण किया है जिसमें एक उद्देश्य छिपा हुआ है। जब तक इसका स्वार्थ जिन्दा रहेगा जाति का विनाश नहीं हो सकता। इसी कारण जाति विहीन समाज की रचना नहीं हो सकती है। मण्डल कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार लगभग 1500 जातियां अनुसूचित जाति 1000 जातियां अनूसूचित जनजाति और 3743 जातियां अन्य पिछड़े वर्ग के अन्तर्गत आती है। इन जातियों को मिलाकर 6,000 जातियों से अधिक बनती है। ये सभी जातियां मनुवादी व्यवस्था के आधार पर जातिवाद का शिकार है इसका शिकार कोई अधिक है तो कोई कम है। अगर जातियां भाईचारा के आधार पर एक साथ संगठित हो जाती है तो एक बहुजन सभा का निर्माण हो सकता है, जो अपने आप 85 प्रतिशत आबादी वाली एक बहुत बड़ी शक्ति बन सकता है।[19]

भारत में हर राजनीतिक दल मनुवादी शक्तियों द्वारा ही संचालित हैं चाहे कांग्रेस हो या कम्युनिस्ट पार्टी हो, समाजवादी, भाजपा, इन सब पार्टी पर असर देखने को मिल सकता है। निम्न वर्ग की कोई कल्याणकारी योजना की बात आती है तो यह दिखाया जाता है कि वह अहसान कर रहे है यदि सुप्रीम कोर्ट, हाई कोर्ट हायर जुडीशियरी, फौज पुलिस, ब्यूरोकेसी में या अन्य विभागों में इस समाज के लोग एक अनुपातिक रूप से संगठित होंगे तो देश का नक्शा ही बदल जायेगा। यह एक सपना ही है जिसे हमारे दलित चिंतक देखा करते थे। वही झलक बसपा के चिन्तकों में परिलक्षित होती है।

---

[19] मायावती, *बहुजन समाज और उसकी राजनीति,* बहुजन समाज पार्टी लखनऊ, अक्टूबर, 2000, पृ. 28-30.

मायावती का दृढ़ विचार है कि जब तक बहुजन समाज द्वारा निर्वाचित अपना राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री इनके बिना समाज का पूर्ण विकास सम्भव नहीं हो सकता है। इसी परिप्रेक्ष्य में वह आगे कहती है कि बहुजन समाज को बनाये रखने व उसके स्वाभिमान को बनाकर उसको आगे बढ़ाने के लिये यही मौका है कि बहुजन समाज पार्टी के माध्यम से बनाया गया राष्ट्रपति राज्यपाल और प्रधानमंत्री व मुख्यमन्त्री दे सके। मनुवादी पार्टी के माध्यम से यह मौका नहीं मिल सकता। मिल भी गया तो वह कठपुतली मात्र ही बनकर रह जायेगा।[20]

लेकिन बहुजन समाज संगठित नहीं है इसको संगठित होने में काफी मेहनत करनी होगी। अनुसूचित जातियों के साथ पिछड़े वर्ग व अल्पसंख्यक नहीं आते तब तक मनुवादी शक्तियां इनका लाभ उठाती रहेगी। इनको संगठित न होने के लिये पूरी शक्ति के साथ जाति का सहारा लेती रहेगी। इसलिये बहुजन समाज को स्वयं जागरूक होना होगा। इसके साथ ही इस समाज में जिसको कुछ थोड़ा लाभ दिखाई देता है वह अलग खिसक जाता है। 6 दशक का अनुभव यह बताता है कि बहुजन समाज में उच्च वर्गी लोगों ने आरक्षण को कभी दिल से न चाहा न ही इस वर्ग का साथ दिया है।

आगे मायावती कहती है कि बहुजन समाज के लोगों को यह बात सोचनी चाहिये कि मनुवादी पार्टियों के लोग शुरू से ही आरक्षण विरोधी मानसिकता रखते रहे हैं। आज भी इनकी अन्दरूनी मानसिकता वही है लेकिन आज पार्टियों के लोग अपने राजनैतिक स्वार्थों के कारण मजबूरन अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्गों के लोगों को सरकारी नौकरियों में आरक्षण के अधूरे पड़ें कोटे को भरने व पदोन्नति में आरक्षण की पुरानी व्यवस्था को बहाल करने के लिये संविधान में संशोधन विधेयक लाते हैं इतना ही नहीं ये पार्टी अनुसूचित जाति व अन्य जनजातियों के लोगों को उनकी बढ़ती आबादी के अनुपात में आरक्षण का कोटा बढ़ाने के लिये संविधान में संशोधन विधेयक लाने की बात करती हैं। लेकिन अनुसूचित जाति व जनजातियों ने मनुवादी पार्टी की कथनी और करनी में अन्तर देखकर, इन वर्गों के लोगों ने मनुवादी पार्टी से अलग, अपनी पार्टी बनाने या बहुजन समाज पार्टी में मिल जाने का रूझान

---

[20] Ibid., p.33.

अपना लिया है। क्योंकि वोटों की खातिर इन वर्गों के लोगों ने आरक्षण व अन्य सुविधायें देने का भी लालच मनुवादी पार्टी द्वारा दिया जा रहा है। मनुवादी पार्टियां इसी प्रकार का लालच पिछड़ा वर्ग व अल्पसंख्यक वर्ग को भी देती रही है देखा जाये तो मनुवादी पार्टियों ने अनुसूचित जाति, अन्य जनजातियों, पिछड़ा वर्ग, एवं अल्पसंख्यक वर्ग के लोगों को कभी कोई सुविधा पूरी नहीं कर सकी है। इसके साथ ही आगे कोई उम्मीद नजर नहीं आती है। अम्बेडकर के अथक प्रयासों का लाभ, केवल बहुजन समाज पार्टी के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। जिसे उत्तर प्रदेश में चार बार सत्ता में आयी बहुजन समाज पार्टी की सरकार ने कर दिखाया है।[21]

वह आगे लिखती है कि बहुजन समाज पार्टी की स्थापना हुई। उस समय बहुजन समाज पूरे तौर पर जातिवाद का शिकार था इसी जाति को लेकर 6,000 जातियों को भाईचारे के आधार पर जोड़ने का प्रयास किया गया क्योंकि मनुवादी पार्टियों ने इनका जातिवाद के आधार पर विभाजन कर रखा था इनके लिये काफी लम्बे संघर्ष के बाद, भारतीय संविधान के मुताबिक इनको सम्मानजनक नाम दिया गया जो अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व पिछड़ा वर्ग के नाम से पुकारा जाने लगा हालांकि सवर्णों ने पिछड़ी जातियों के लोगों को सेवाओं में सवर्णों के साथ जोड़े रखा लेकिन फिर भी इनको सम्मान प्राप्त नहीं हुआ। ये अपने को नकली सवर्ण बनाकर अनुसूचित जाति व जनजाति के लोगों से अलग रखकर बनावटी ढोंग करते रहे। इनका लाभ उठाकर मनुवादी राजनैतिक पार्टियां शक्तिशाली होती चली गई। जबकि अनुसूचित जाति व जनजाति एवं पिछड़े वर्ग के लोग एक ही शूद्र वर्ण की जुड़वा संताने हैं। जिसमें बहुजन समाज के अन्तर्गत विभिन्न समाज बन चुके है। बहुजन समाज को संगठित किये बिना केन्द्र व प्रदेशों की सत्ता पर कब्जा नहीं हो सकता।[22]

बहुजन समाज पार्टी की बढ़ती शक्ति को देखते हुये इसको अन्दर से कमजोर करने के प्रयास भी होते रहे हैं। कुछ लोग तो बहुजन समाज पार्टी में आते ही पद के लिये हैं। उसके बाद बहुजन समाज पार्टी को वे आज भी अछूत मानते हैं लेकिन कुछ दिन के बाद यह अपनी

---

[21] कन्हैयालाल चंचरीक, *भारत में दलित आन्दोलन; एक मूल्यांकन! भाग-2,* अतुल प्रिंटर्स, नई दिल्ली, 2006, पृ. 52-53.

[22] मायावती, op.cit., (19) pp. 33-34.

कब्र खुद खोद लेते हैं, जो भी बहुजन समाज पार्टी से अलग हुआ वही बर्बाद होता दिखाई दिया क्योंकि यह तो बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय का काम करने वाली व लड़ने वाली पार्टी है। लोक चिन्तक सर्वोपरि है यही है कि 85 प्रतिशत आम जनता सर्वजन की भलाई, उसके चतुर्मुखी विकास की यहां चिन्ता है सत्ता में समुचित भागीदारी और बहुजन समाज के व्यापक हितों की चिन्ता उसकी पहली प्राथमिकता होती रही है। यह हमारे पूरे देश में बहुजन समाज पार्टी एक ऐसी पार्टी बनकर उभरी जिसने बहुजन समाज के वास्तविक स्वरूप को गहराई से पहचाना है बहुजन समाज पार्टी अपने समाज की वास्तविकता की जानकारी के लिये कॉडर कैम्प व अन्य तौर-तरीकों के माध्यम से उन्हें हर प्रकार की जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की है। ये कोशिशे आज भी जारी है कल भी जारी रहेगी जब तक बहुजन समाज पार्टी का प्रत्येक व्यक्ति अपनी वास्तविकता को नहीं पहचान न लेगा। तब तक बहुजन समाज का वास्तविक निर्माण नहीं हो सकता है बहुजन समाज पार्टी ने यह कार्य 14 अप्रैल 1984 से किया तब से मनुवादी पार्टियों ने हर प्रकार की कोशिशे की है कि बहुजन समाज किसी भी कीमत पर एकत्रित होना नहीं चाहिये। मनुवादी पार्टियों ने हर प्रकार से बहुजन समाज के प्रत्येक अंग को व बहुजन समाज पार्टी के संस्थापक के बारे में व अन्य नेताओं के बारे में भिन्न-भिन्न अफवाह फैलाने व गुमराह करने का अथक प्रयास किया। लेकिन अफवाह फैलाने का कार्य मनुवादी पार्टियों ने स्वयं न करके कुछ बहुजन समाज वर्ग के व्यक्तियों से कराया। जो दिशाहीन हो चुके थे। इसके बाद भी इस पार्टी ने अपने मुख्य उद्देश्य को ध्यान में रखकर अपना कदम आगे बढ़ाया। इन मनुवादी पार्टी को इस अपवाह का मुह तोड़ जवाब दिया जिसके कारण यह पार्टियां कुछ थक हार कर बहुजन समाज को बनते देखकर बहुजन समाज से समझौते के लिये तैयार होने लगी। कुछ मनुवादी पार्टी ने अपनी मानसिकता पर बहुजन समाज पार्टी से समझौते किये। जिससे देखा जाये तो इनकी सोच कितनी बदली है प्रदेश स्तर पर इन पार्टियों से समझौते भी हुये। जिससे यह देखा गया कि सवर्ण स्तर पर मनुवादी पार्टियों की मानसिकता में कोई बदलाव नहीं आया है समझैते के माध्यम से यह देखा गया कि जो समझौते से सीटे बहुजन समाज पार्टी के हिस्से में आती है इन पर सवर्ण हिन्दुओं के मत नहीं मिल पाते बल्कि दूसरी मनुवादी पार्टी के पास मत चले जाते हैं। जिससे की हमारी पार्टी को नुकसान के अलावा कुछ

नहीं मिलता है। जो सीटे समझौते के द्वारा मनुवादी पार्टियों के पास होती है उनको बहुजन समाज का एक-एक वोट प्राप्त हो जाता है। उनको पूरा का पूरा लाभ प्राप्त होता है इससे बहुजन समाज पार्टी इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि इनसे चुनावी समझौते करने से कोई लाभ प्राप्त नहीं हो सकता। इससे यही देखा है कि भाईचारे के आधार पर आपसी समझौता करना चाहिये जिससे कि यही समझौता स्थायी और टीकाऊ होगा।

आज बहुजन समाज अपने समाज की तरफ काफी आकर्षित होता दिखाई दे रहा है। अल्पसंख्यक समाज के प्रति बहुजन समाज पार्टी की विचारधारा कांशीराम बसपा की स्थापना से पहले से ही वह अल्पसंख्यक वर्ग के अधिकारों के प्रति जागरूक बने रहे। उनका विचार था कि अधिकतर अल्पसंख्यक वर्ग बहुजन समाज से ही परिस्थिति वश निकलकर दूसरे धर्मों में गये हैं। भारत में अल्पसंख्यक वर्ग के लिये सामाजिक धार्मिक स्वतन्त्रता के साथ-साथ उनके अधिकारों की सुरक्षा सर्वोपरि रही है। फिर भी लोकतान्त्रीक देश में धार्मिक अल्पसंख्यक वर्ग बहुसंख्यक समाज की तरह विकास की स्वतन्त्रता होनी चाहिये उनके धर्म भाषा सांस्कृति के विकास की सुरक्षा का पूरा इन्तजाम होना चाहिये। जिससे उनका विकास सम्भव हो सके।

मायावती कहती है कि ''धार्मिक अल्पसंख्यक समाज के अन्तर्गत मुस्लिम, सिख, ईसाई, पारसी व बुद्धिष्ट आदि धर्मों को मानने वाले लोग आते हैं। इस अल्पसंख्यक वर्ग में इस प्रकार के अधिकतर लोगों की संख्या रही है, जो हिन्दु धर्म की बुराईयों छुआछुत जात-पात से तंग आकर अधिकतर लोगों ने धर्म परिवर्तन कर लिया था। इनको आज भी भारतीय संविधान के अनुसार आरक्षित वर्ग में रखा जाता है। इसी कारण धर्म परिवर्तन करने वालों को हम अपने समाज का अंग मानकर चलते हैं क्योंकि बहुजन समाज पार्टी ने अपने बहुजन समाज में इनको शामिल किया है। सामाजिक आर्थिक शैक्षणिक स्थिति में इस वर्ग का कोई परिवर्तन खास नहीं हुआ है। लेकिन यह वर्ग हिन्दु धर्म की बुराईयों छुआछुत ऊंच-नीच व जात-पात से तंग आकर इसने धर्म परिवर्तन किया फिर भी इनकी स्थिति ज्यों की त्यों बनी रही है''।[23]

---

[23] Ibid., p.40.

अम्बेडकर ने धार्मिक अल्पसंख्यक वर्ग की मांगों को गोलमेज सम्मेलन लन्दन में भी उठाया था। अम्बेडकर ने ब्रिटिश प्रधानमत्री रैमने मैकडोनाल्ड की अध्यक्षता में बनी समिति में एक सदस्य की हैसियत से अल्पसंख्यकों के प्रश्नों को उठाया था और इस समिति में आगा खां, मौलाना मुहम्मद अली, सर शाहनवाज भुट्टों, नवाब छतारी वाले जैसे मुस्लिम सम्प्रदाय के नेता भी मोंजूद थे। कुछ ईसाइयों की ओर से भी थे जिनमें राव बहादुर, पन्नीर सेल्बम, सर ए. पी.पेट्रो तथा हिन्दुओं की तरफ से डॉ. मुंजे चिन्तामणि, राजा नरेन्द्रनाथ जैन, इन सब निष्पक्ष नेताओं ने भाग लिया था। सिक्खों की तरफ से सरदार सम्पूर्ण सिंह और सरदार उज्ज्वल सिंह ने भाग लिया था। गोल मेज सम्मेलन में अम्बेडकर ने अल्पसंख्यक वर्ग के मौलिक अधिकारों धार्मिक सांस्कृतिक भाषा एवं जीवन की सुरक्षा के बारे में प्रश्न उठाये। इस समाज के प्रत्येक वर्ग के लिये जाति समुदाय नस्ल भेदभाव धर्म लैंगिक भेदभाव के अधिकारों को समाप्त करने के लिये इन्होंने वहॉ अथक प्रयास किया था। गोल मेज सम्मेलन में इस बात का भी प्रमाण है कि उस समिति में महात्मा गांधी और सरोजिनी नायडू जैसे नेता भी उपस्थित थे।

देखा जाये तो कांशीराम और मायावती ने अल्पसंख्यक समाज के लिये बहुत ठोस काम कर दिखाये, जैसे कि केन्द्र राज्य स्तर पर उनके लिये आयोग बनवाये भीर भी उन पर कभी-न-कभी अत्याचारों की मार होती रही। जिससे की मायावती ने इस समस्या का गहराई से सोच समझकर उसका अध्ययन किया। उन्होंने अपने अनुभव से इस वर्ग को सामाजिक सांस्कृतिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान दिया जिसको बहुजन समाज का शक्तिशाली अंग बनाने में योगदान दिया जा सकें।[24]

जब भी अल्पसंख्यक वर्ग के लोगों ने हिन्दु धर्म को छोड़कर अन्य धर्म अपना लिया बहुजन समाज पार्टी ने उनकी मांग का कभी विरोध नहीं किया। अनुसूचित जाति अन्य जातियों के आरक्षण की सूची में शामिल होने की बात कही है तो सरकार उन्हें अनुसूचित जाति, जनजाति अन्य पिछड़े वर्ग के लोगों को मिल रहे आरक्षण के कोटे में कभी कोई कमी नहीं आने दी। इन लोगों के अन्दर सामंजस्य और भाईचारा भी बना रहे। उन्होंने हिन्दु धर्म में ऐसी जातियां जिनकी सामाजिक, आर्थिक व शैक्षणिक, स्थिति अनुसूचित जाति/जनजाति व पिछड़े वर्ग की तरह बनी

---

[24] Ibid., p.41.

हुई है। उस वर्ग को भी आरक्षण सूची में लाने के लिये उसका स्वागत किया। संख्या के आधार पर सरकार को कोटा भी बढ़ाना चाहिये लेकिन सरकार इसकी तरफ ध्यान नहीं दे रही है। इस बात को भी उठाया।[25]

इन वर्गों की आर्थिक, सामाजिक प्रगति की सुरक्षा के प्रति उसकी नैतिक जिम्मेदारी का बहुजन समाज पार्टी को पूरा का पूरा अहसास रहा है यही नहीं साम्प्रदायिक दंगों में भी उनको हानि उठानी पड़ी। फिर भी इन सारी समस्याओं का गम्भीरता से विचार करते हुये वह स्पष्ट कहती है कि धार्मिक अल्पसंख्यक समाज में जो लोग हिन्दु धर्म को छोड़कर मुस्लिम, सिख, ईसाई, पारसी व बुद्धिष्ट है। इन लोग की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक स्थिति अच्छी नहीं है ये वर्ग आये दिन साम्प्रदायिक दंगों से दु:खी होकर, आज यह लोग अपने आप को असुरक्षित महसूस कर रहे हैं और केन्द्र व प्रदेश सरकारें इनको गम्भीरता से नहीं सोच रही है। यह लोग काफी परेशान तो कभी चिन्तित दिखाई देते हैं कुछ लोग (हिन्दु अल्पसंख्यक) हिन्दु धर्म को छोड़कर जैसे कि पहले अनुसूचित जाति, जनजाति वर्ग व पिछड़े में आते है अब वह अन्य धर्मों में शामिल हो गये हैं। ऐसे वर्ग की स्थिति अन्य वर्ग की अपेक्षा बहुत दयनीय बनी हुई है। साथ ही धार्मिक अल्पसंख्यकों के वास्तविक स्वरूप को पहचान कर उन्हें बहुजन समाज के अन्य अंगों की तरह मनुवादी व्यवस्था का शिकार होना पड़ा। इस वर्ग को साथ न लेकर चला गया तो इस वर्ग की स्थिति अनुसूचित जाति व जनजाति एवं पिछड़े वर्ग के लोगों से भी बदतर हो जायेगी।[26]

बहुजन समाज पार्टी की स्थापना

कांशीराम ने अम्बेडकर के जन्म दिवस (14 अप्रैल, 1984) के अवसर पर दिल्ली में बहुजन समाज पार्टी के गठन की घोषणा की जिसमें कांशीराम ने बहुजन समाज पार्टी का चुनाव चिन्ह हाथी उन्होंने इसलिए नहीं रखा कि अम्बेडकर की रिपब्लिकन पार्टी का चुनाव चिन्ह था

---

[25] कन्हैयालाल चंचरीक, op.cit., (21), p. 58.

[26] Ibid.,p. 42.

बल्कि उन्होंने इस कारण रखा कि यह देश के मूल निवासियों की संस्कृति का प्रतीक रहा है।[27] और 22 से 24 जून को लाल किले के सामने वाले मैदान में पार्टी का प्रथम अधिवेशन हुआ। कांशीराम ने अनुसूचित जातियों व जनजातियों एवं पिछड़े वर्ग तथा अल्पसंख्यक समुदायों को मिलाकर इसका नाम बहुजन दिया। यह कुल आबादी का 85 प्रतिशत भाग है। यह बहुत परिश्रमी वर्ग है फिर भी शोषित है। दूसरी तरफ ब्राह्मण क्षत्रिय तथा वैश्य तीन जातियां है ये आबादी के 15 प्रतिशत है ये अल्पजन शोषक है। देश के अधिकतर संसाधनों व सत्ता पर इसका कब्जा बना रहा है। यह रेखा चित्र से बताया गया है:-

27 सतनाम सिंह, Op.cit., (5), pp.30-34.

सामाजिक व्यवस्था

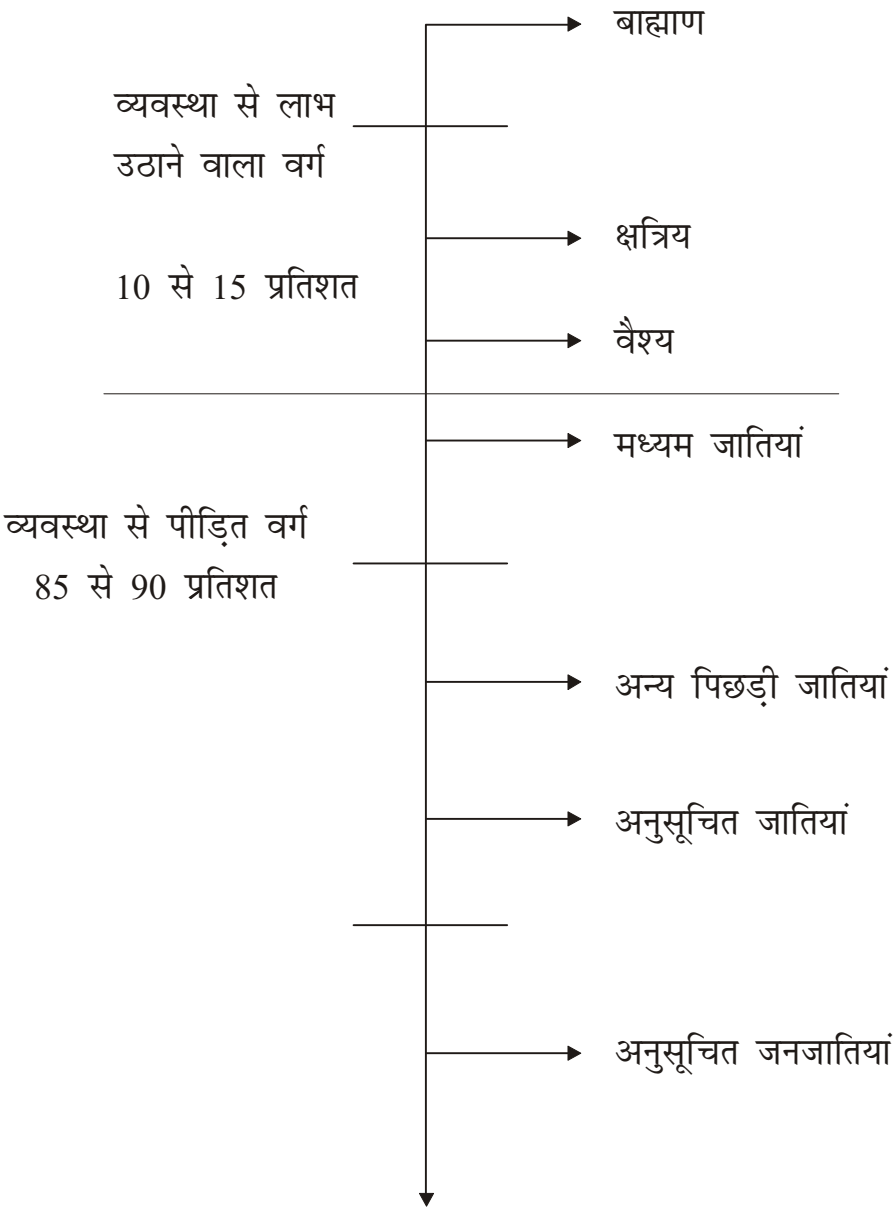

कांशीराम का फार्मूला 1.6

इस रेखाचित्र से कांशीराम गांव-गांव में जाकर लोगों को समझाते जिससे की शोषितों को अपने शोषण का पता चल सके।[28] कांशीराम का फार्मूला-जिसकी जितनी भागीदारी, उसकी उतनी हिस्सेदारी, इससे पहले अम्बेडकर ने कहा था कि सत्ता वह मास्टर चाबी है जिससे देश की सारी तिजोरियां खुल सकती है यानी की यह वर्ग सत्ता प्राप्त करके शोषण से मुक्ति प्राप्त

[28] सतनाम सिंह, Op.cit., (5) p. 38.

कर सकता है। सत्ता से ही कांशीराम का फार्मूला लागू होगा जिससे की पीढ़ी दर पीढ़ी जात दर जात की आर्थिक विषमताएं दूर होगी।[29]

अम्बेडकर द्वारा स्थापित 'इंडिपेडेंट लेबर पार्टी' और ''शेडयूल कास्ट फेडरेशन'' दोनों राजनैतिक दलों का आधार बहुत संकीर्ण था और इसमें दलितों की बहुलता थी। यद्यपि इंडिपेडेंट लेवर पार्टी को अम्बेडकर ने जाति नहीं बल्कि वर्ग के आधार पर स्थापित किया था इसके पश्चात रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया तथा दलित पैंथर्स के गठन में अम्बेडकर के बाद दलित नेतृत्व ने दलित आत्म निर्भर राजनैतिक दलों को दलित जातियों से निकाल अन्य पिछड़ी जातियों से जोड़कर व्यापक जनाधार स्थापित करने का प्रयास किया। परन्तु इसमें उनको खास सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। इसी कारण अतीत से शिक्षा लेकर कांशीराम ने अपने आत्मनिर्भर राजनैतिक दल को स्थापित करने से पहले अपने सामाजिक आधार को विस्तृत करने के लिये उन्होनें बहुजन समाज की कल्पना को परिभाषित किया। इस परिकल्पना में यद्यपि उन्होंने दलितों को केन्द्र में रखा इसके साथ ही पिछड़ी तथा अति पिछड़ी जातियों व अल्पसंख्यकों को इन से जोड़ने का व्यापक प्रयास किया। यह प्रयास उन्होंने वामसेफ की स्थापना करके अनेक वर्गो के लोगो को अपनी ओर आकर्षित किया। इसकी कमी को डी॰एस॰फोर॰ की स्थापना ने पूरा किया।[30]

कांशीराम गठबंधन की राजनीति की विचारधारा को अपनाते हुये वह कहते हैं कि "जिसकी जितनी भागीदारी, उसकी उतनी हिस्सेदारी" जिससे कांशीराम का आश्य शोषित पीड़ित वर्ग जो सदियों से अपने अधिकारों से वंचित रहा है। इस वर्ग की संख्या 85 प्रतिशत होने पर भी 15 प्रतिशत संख्या वाला वर्ग इन पर सदियों से सत्ता जामयें बैठा है। कांशीराम उसी वर्ग का एक राजनैतिक गठबंधन तैयार करना चाहते हैं जिससे वह वर्ग सत्ता प्राप्त कर सके, उन्होंने सत्ता को प्राप्त करने की विचारधारा अम्बेडकर से प्राप्त की। अम्बेडकर ने कहा था कि सत्ता वह मास्टर चाबी है जिससे देश की सारी तिजोरियाँ खुल सकती है। यानी कि शोषित पीड़ित वर्ग

---

[29] *बहुजन संगठन,* नई दिल्ली, अंक-17 ता. 19 से 25 दिसम्बर, 2000.

[30] विवेक कुमार, *बहुजन समाज पार्टी एवं संरचनात्मक परिवर्तन,* सम्यक प्रकाशन, 2007, नई दिल्ली, पृ. 25-26.

अपने अधिकार प्राप्त कर सकता है। कांशीराम वहीं गठबंधन की राजनीति का फार्मूला लागू करते हैं जिससे पीढ़ी दर पीढ़ी जात दार जात की आर्थिक विषमताएँ दूर होंगी।[31]

अम्बेडकर ने दलित और पिछड़ी जातियों को जोड़कर सवर्ण हिन्दुओं की ताकतों के खिलाफ आन्दोलन करने का आह्वान किया था जिससे वह दलित व पिछड़ी जातियों के साथ एक राजनैतिक गठबंधन बनाने का प्रयत्न करते रहे। यह प्रयत्न समता, स्वतन्त्रता एवं बन्धुता को प्राप्त करने के लिये संघर्ष करेगा और कांशीराम इसी मिशन को आगे निष्ठापूर्ण आगे बढ़ाते हैं। कांशीराम ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को अलग-अलग करके देखा। और दलित व अन्य पिछड़ी जातियों को एक दूसरे के साथ जोड़ने का प्रयास किया।[32] यह प्रयास सफल भी हुयें जिससे बसपा ने उत्तर प्रदेश में तीन बार अल्पमत गठबंधन (MC) की सरकार बनायी। इसके वाद भी उनको असफलताओं के साथ-साथ सफलता भी प्राप्त होती रही।

कांशीराम ने जाति चेतना के राजनैतिक ध्रुवीकरण से उत्तर प्रदेश में राजनीति की कायापलट कर दी। अब इस उत्तर प्रदेश में स्वर्ण वर्ग स्वतंत्र रूप से सत्ता हासिल नहीं कर सकता था क्योंकि कांशीराम ने सवर्ण वर्ग को इतना लाचार कर दिया की वे जाति के नाम पर चुनाव जीत ही नहीं सकता। लेकिन हिन्दू के नाम पर तो जीत हासिल कर सकता था जाति के नाम पर नहीं। वह दलित व अन्य पिछड़े वर्गो के बिना सत्ता हासिल नहीं कर सकता क्योंकि इन वर्गों को कांशीराम अपनी ओर आकर्षित कर चुके थे। जिससे इस उत्तर प्रदेश में बिना गठबंधन की सवर्ण सरकार नहीं बन सकती थी। जिसका लाभ आगे चलकर मायावती ने तीन बार उठाया जो उत्तर प्रदेश की मुख्य मंत्री बनी। कांशीराम ने भाजपा, सपा, कांग्रेस को इतना मजबूर कर दिया की इन पार्टियों ने तीन बार बसपा के साथ गठबंधन करके सरकार बनायी।[33]

ब्राह्मणवादी विरोधी विचारधारा का सार यह है कि भारतीय समाज एवं सोपानवादी समाज बना रहा है और इसके शीर्ष पर ब्राह्मणवादी सवर्ण बैठे है। उन्होनें सदियों से बहुजन

---

31 *बहुजन संगठन,* नई दिल्ली, अंक-17, दिनांक 19 से 25 दिसम्बर, 2000.

32 *बहुजन संगठन,* नई दिल्ली, अंक-18, दिनांक 3 से 9 जुलाई, 2000.

33 कन्हैया लाल चंचरीक एवं नरेन्द्र चन्द्रा, *मायावती-संघर्ष और सत्ता का सफर,* यूनीर्सिटी पब्लिकेशन,नई दिल्ली, 2003, पृ. 39.

समाज को मानसिक और सामाजिक रूप से अपना दास बना कर रखा। और उन पर श्रम और आर्थिक शोषण के जरिये सवर्णो ने अपनी सत्ता हर क्षेत्र में कायम कर रखी थी। भारतीय समाज को कांशीराम ने सीधे तौर पर दो हिस्सों में बांटा। वह सवर्णो को अल्पजन समाज की संज्ञा देते है जबकि दलित व पिछड़े वर्गो को उन्होंने बहुजन सामाज का नाम दिया। उन्होंने बहुजन की अवधारणा का आधार जाति प्रथा पर आधारीत अम्बेडकर की रचना एनिहिलेशन ऑफ कास्ट रही हैं। कांशीराम अपने भाषणों और साक्षात्कारों में अपनी इस अवधारणा को स्पष्ट करते हुए बताते है कि ब्राह्मणवादी व्यवस्था ने अपनी सत्ता को कायम रखने के लिये बहुजन समाज को 6 हजार जातियों में विभाजित कर रखा है इन 6 हजार जातियों को संगठित करके ही ब्राह्मणवादी प्रभुसत्ता को खत्म किया जा सकता है। जिससे इन सभी जातियों को जोड़कर राजनीतिक सत्ता पर अधिकार स्थापित किया जा सकता है।[34]

कांशीराम का विश्वास था कि दलित व अन्य पिछड़े वर्गों की शक्तियों के स्रोतों पर सवर्णो ने एकाधिकार स्थापित कर रखा है इसके लिये उन्होंने जाति उत्पीड़न और सामाजिक विषमता को धार्मिक आदान-प्रदान करके ही कांशीराम हिन्दु धर्म और उसके ग्रन्थों की आलोचना भी करते है। उनके अनुसार देश की असमानता, अन्याय और भेदभाव का कारण हिन्दु समाज की धर्मिक व्यवस्था रही है। जिन्होंने अन्ध-विश्वासों के द्वारा हजारों वर्ष तक मानसिक दासता की जंजीरो में उन्हें जकड़े रखा। जिसके कारण वह शोषण का शिकार होते रहे। उन्होने आर्य-अनार्य की विभाजन रेखा खीच कर बहुजन समाज को इस देश का मूल निवासी माना। उनका विश्वास है कि देश के बहुसंख्यक ने ब्राह्मणवादी अत्याचारों से ग्रस्त होकर धर्म परिवर्तन किया। जो मूल रूप से दलित व अन्य पिछड़ी जातियों के ही लोग थे इसलिये बहुजन समाज पार्टी अल्पसंख्यक वर्ग को बहुजन समाज का हिस्सा मानती है।

---

[34] Ibid., p. 85.

कांशीराम की राजनीति के तीन सिद्धान्त

कांशीराम अपने राजनीतिक आन्दोलन को तीन सिद्धान्तों पर विकसित करते हैं।[35] पहला जातीय सम्मान, दूसरा भागीदारी और तीसरा वोटों को लुटने और बिकने से बचाना। जाति उन्मूलन को उन्होंने अपना ध्येय नहीं बनाया वरन जाति के उभार को उन्होंने अपनी राजनीति के केन्द्र में रखा। सामाजिक परिवर्तन और नवजागरण के जन नायकों को उन्होंने जातिय सम्मान और स्वाभिमान आंदोलन से जोड़ने का अभियान चलाया। शाहू महाराज, महात्मा ज्योतिवा फुले, नारायण स्वामी, पेरियार, डॉ॰ अम्बेडकर, भगवान बुद्ध, कबीर, रैदास, सावित्री बाई फूले इत्यादि विभूतियों को उन्होंने दलित वर्गों का नायक बना दिया। इससे पहले कभी दलितों को ठीक से नहीं जाना जाता था उन्हें जनता जानने लगी इससे इन नायकों का जातिकरण करने के सिवाय उन्होने परिवर्तन की कोई क्रांतिकारी भूमिका नहीं निभाई।

पहला सिद्धान्त भागीदारी आंदोलन के तहत कांशीराम ने नारा दिया कि वोट हमारा राज तुम्हारा नहीं चलेगा नहीं चलेगा। यह कांग्रेस के लिये चेतावनी थी। कांग्रेस दलितों, पिछड़ों और मुसलमानों के वोटो पर राज कर रही थी। इस वोट बैंक को कांग्रेस से अलग करने के लिए उन्होनें भागीदारी का सवाल उठाया। उन्होंने समझाया कि बहुजन समाज की संख्या 85 प्रतिशत है पर 15 प्रतिशत अल्प आबादी वाला सवर्ण वर्ग उस पर राज करता आया है।

द्वितीय सिद्धान्त भागीदारी आन्दोलन ने जातिय चेतना के तुष्टिकरण की राजनीति विकसित की। यह एक नई तरह का जातिय जागरण था। जिसने दलित जातियों में जातिय ध्रुवीकरण की चेतना पैदा की। इस क्रम में कांशीराम ने चमार जाति को केन्द्र में रख कर, अन्य जातियों का ध्रुवीकरण किया, जिन्होंने पारसी, बाल्मीकि, धोबी, कोरी व अन्य पिछड़ी जातियों तथा अल्पसंख्यक वर्गों के अलग-अलग सम्मेलन किए। जिससे उत्तर प्रदेश के अन्दर अब कोई भी पार्टी जाति के नाम पर सत्ता प्राप्त नहीं कर सकती थी। इस कारण उत्तर प्रदेश के अन्दर गठबंधन सरकारे बनने लगीं उसका लाभ बसपा ने उठाया। उदाहरण के तौर पर देखा जाये तो

---

[35] कंवल भारती, "दलित राजनीति का संक्षिप्त इतिहास" में राजकिशोर,(सं,) *आज के प्रश्नः दलित राजनीति की समस्यायें,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृ. 17-18.

इन गठबंधन सरकारों का लाभ मायावती तीन बार उठा कर उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री बनी। इसी सिद्धान्त से उसका मत बैक बढ़ता गया।

कांशीराम ने अपने सिद्धान्त का लाभ उठाते हुए पहले 1993 में सपा के साथ गठबंधन किया और मुलायम सिंह मुख्यमन्त्री बने। कुछ आपसी मतभेद के कारण यह गठबंधन आगे नहीं चल सका इस गठबंधन सरकार को अल्पमत गठबंधन कहा। उसी समय बसपा को भाजपा का समर्थन मिलने के कारण जून 1995 को मायावती उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री बनी। लेकिन बसपा और भाजपा के बीच कुछ आपसी मन-मुटाव के कारण यह गठबंधन ज्यादा समय तक नहीं चल सका। यह भी सरकार अल्पमत गठबंधन की सरकार थी। उसके बाद 1997 में फिर भाजपा और बसपा के बीच गठबंधन तो हुआ पर शर्त थी कि छः महीने बसपा मुख्यमंत्री बनेगी और छः महीने भाजपा सत्ता संभालेगी लेकिन यह भी गठवंधन ज्यादा समय तक नहीं चल सका यह भी अल्पमत गठबंधन था। इसके बाद 2003 में एक बार फिर भाजपा और कांग्रेस ने बसपा को अपना समर्थन देकर, एक गठबंधन की सरकार बनायी और मायावती तीसरी बार मुख्यमंत्री बनी। इस सरकार को भी अल्पमत गठबंधन की सरकार के नाम से पुकारा जा सकता है।

जिससे कहा जा सकता है कि बसपा ने अपने सिद्धान्त के माध्यम से तीन बार उत्तर प्रदेश में गठबंधन की सरकारें तो बनायी पर यह गठबंधन अम्बेडकर की विचारधारा के अनुरूप नहीं थे। क्योंकि उन्होंने समता, स्वतन्त्रता व बन्धुता को लेकर गठबंधन बनाने की बात कही थी। भाजपा और कांग्रेस की विचारधारा तो अम्बेडकर की विचारधारा से नहीं मिलती तों कांशीराम ने गठबंधन क्यों किया? दूसरा पक्ष देखा जाये तो आज के युग में अम्बेडकर की विचारधारा को लेकर बसपा चलती है। तो उसे कुछ नहीं मिलेगा। क्योंकि कुछ दलित बसपा के साथ है तो कुछ ब्राह्मणवादी पार्टी के साथ है यही हाल अन्य पिछड़े वर्गों का है। इसलिए कांशीराम अपने अवसरवादी सिद्धान्त को लेकर चल रहे हैं।

तीसरे सिद्धान्त के तहत कांशीराम ने दलित अन्य जातियों के वोटों की कीमत का बोध कराया। उन्होंने कहा कि लोकतंत्र में वोटों की ताकत से शासक पैदा होता है इस कारण दलित वर्ग शासक नहीं बन सका, जब तक वह अपने वोटों की ताकत को नहीं पहचानेगा। यह वर्ग

इन वोटों का कभी सही इस्तेमाल नहीं कर सका है। उसका वोट खरीदा व लूटा जाता रहा है। जिसके कारण कांग्रेस व अन्य पार्टियों ने इस वर्ग को सत्ता से बाहर रखा। इस वर्ग को शासक बनना है तो उन्हें अपने वोटों के महत्व को समझना होंगा। जिसके कारण उन्होंने इस वर्ग के उनके वोट लूटने बेचने से ऊपर उठा कर, इस वर्ग के अन्दर एक नई शक्ति पैदा की। जिसके परिणाम स्वरूप बसपा के वोट बैंक में बडोतरी होने लगी। इसके पश्चात बसपा एक शक्तिशाली पार्टी के रूप में उभरी। कांशीराम ने इस सिद्धान्त से दलित व अन्य पिछड़ी जातियों का वोट बैंक तैयार किया।[36]

इन तीन सिद्धान्त के साथ ही कांशीराम की दृढ़ मान्यता है कि दलित व अन्य पिछड़े वर्ग अन्यायपूर्व सोपानवादी व्यवस्था का शिकार रहे हैं। इन वर्गों को सरकारी सुविधाओं, सामाजिक सुधारो या आरक्षण जैसे प्रावधानों से बदला नहीं जा सकता। ब्राह्मणवादी शक्तियों द्वारा दिये ये प्रावधानों को कांशीराम झुनझुना पकड़ाने से ज्यादा कुछ नहीं मानते है इस आधार पर उन्होंने गांधीवाद का विरोध किया। गांधीवाद को कांशीराम ने ब्राह्मणवाद का दूसरा रूप माना। इनको वह हिन्दु धर्म के पुराने सिद्धान्तों का नवीन संस्करण कहा। इस वर्ग ने जाति व्यवस्था बनाये रखते हुये नवीन संस्करण को तैयार किया जिस कारण अम्बेडकर गांधीवाद के विरूद्ध थे।

कांशीराम का एक ही नारा था कि बहुजन समाज को सत्ता पर नियंत्रण चाहिये। इसी कारण कांशीराम ने चुनावों में अपना कोई घोषणा पत्र भी जारी नहीं किया। उन्होंने सामाजिक परिवर्तन के पांच लक्ष्य निर्धारित किये। आत्मसम्मान के लिये संघर्ष, मुक्ति के लिये संघर्ष, जाति प्रथा के उन्मूलन और विभाजित समाज में भाई-चारे के लिये संघर्ष, छुआछूत व अन्याय, अत्याचार और आंतक के विरूद्ध संघर्ष, कांशीराम इन वर्गों को जोड़ कर वह सत्ता प्राप्त करना उनका मिशन था जो ब्राह्मणवाद के विरूद्ध था।[37]

---

[36] कंवल भारती, *कांशीराम के दो चेहरे,* बोंद्धिष्ट प्रकाशन, रामपुर, 1996, पृ. 14.

[37] मायावती, Op.cit., (19), पृ. 34.

कांशीराम ने मूल निवासी बहुजनों की वैकल्पिक सांस्कृतिक वर्चस्वता स्थापित करने पर जोर दिया। इसके लिये उन्होंने अपना एक सांस्कृतिक जत्था तैयार किया। जिसके द्वारा उन्होंने हिन्दू धर्म को अधर्म व आर्यों का धर्म राम-कृष्ण इत्यादि, अंसख्य पौराणिक नायकों को मनुवादी व बहुजन विरोधी प्रमाणित करने का अभियान चलाया। दूसरी तरफ मूल निवासियों की वैकल्पिक संस्कृति स्थापित करने के लिए बौद्ध धर्म को मूल निवासियों का धर्म तथा गौतम बुद्ध, पेरियार, फूले, शाहू जी, नारायण गुरू, अम्बेडकर इत्यादि जिसे उन्होंने अपनी संस्कृति मनकर उसे साकार रूप दिया। इसके साथ-साथ कांशीराम ने दलित राजनीति की शुरूआत उस दौर से की। जब समूचा तंत्र कांग्रेस और ब्राह्मणवादी दलों के हाथ था उस समय दलितों की आवाज और स्वतंत्रता पर ब्राह्मणों का कब्जा था। कांशीराम के आन्दोलन की मुख्य उपलब्धि दलितों व अन्य पिछड़ी जातियों के प्रति इनको सजग बनाने की रही, क्योंकि ब्राह्मणवादी पार्टियॉ दलित जाति के वोटों को खरीद व लूट लिया करती थी।[38] दलितों को अपने वोटों के प्रति इतनी समझ नहीं थी जिसके कारण वह आसानी से समझौता भी कर लेते थे। इसके साथ ही पिछड़े वर्ग में राजनीतिक चेतना पैदा करने का श्रेय भी कांशीराम को जाता है क्योंकि उन्होंने इस वर्ग को दलितों के साथ जोड़ने का अथक प्रयास किया।

कांशीराम की आलोचना

कांशीराम के विचारों का सकारात्मक पक्ष के साथ-साथ नकारात्मक पक्ष भी देखा जा सकता है वह निम्नलिखित है-

कांशीराम अपने भाषण में कहते है कि राजनैतिक सत्ता वह मास्टर चाबी है जिससे की उसके तरक्की और सम्मान के सभी दरवाजे खुल सकते है। कांशीराम ने इस वाक्य को इस प्रकार उछाला कि अम्बेडकरवाद की राजनीति का यही समीकरण बन गया। इस वाक्य का लाभ कांशीराम ने उठाया। इसके साथ ही अन्य क्षेत्र को निष्क्रय कर दिया गया। जबकि इसके विपरीत अम्बेडकर कहते है कि दलित वर्ग के सभी लोगों पर इस राजनैतिक सत्ता को कायम

---

[38] *बहुजन संगठन,* जालंधर पंजाब, अंक-14 से 22, 15 मार्च, 2002.

नहीं किया जा सकता। आगे कहते है कि इस वर्ग की मुक्ति के लिये सामाजिक उत्थान होना जरूरी है। अम्बेडकर का विचार स्पष्ट रहा कि राजनैतिक क्रांतियाँ हमेशा सामाजिक और धार्मिक क्रांतियो के बाद हुई है। जबकि कांशीराम ने इसको पलट कर देखा जिससे अम्बेडकर के विचारों के विरूद्ध कांशीराम के विचार प्रतीत होते है।[39]

कांशीराम के विचारों में हमेशा सत्ता की चाहत रही है। उन्होंने कभी अवसरवादी राजनीति का सहारा लिया तो कभी अम्बेडकर की विरोधी विचार धारा के विरूद्ध गठबंधन किए, कांशीराम सत्ता को प्राप्त करने के सिवाय दलितों के सामाजिक उत्थान व अन्य समास्याओं पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया। अम्बेडकर के विचारों में हमेशा सामाजिक उत्थान से ही राजनैतिक सत्ता हासिल की जा सकती है इस वर्ग के लिये उन्होने अनेक आन्दोलनों का सहारा लिया जिस से इस वर्ग का विकास सम्भव हो सके।[40]

सबसे पहले कांशीराम पर यह आरोप लगता है कि उन्होंने जातिवाद को बढ़ावा दिया इस जातिवाद से राजनैतिक सत्ता प्राप्त हो सकती थी लेकिन दलितों का सामाजिक उत्थान नहीं हो सकता। उन्होंने आगे चलकर दलित व अन्य पिछड़ी जातियों को जोड़कर देखा जिससे सत्ता प्राप्त हो सके लेकिन सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक इन सभी अधिकारों को नजर अन्दाज किया जिससे उन पर अवसरवादी राजनीति का आरोप लगता है। अम्बेडकर राजनैतिक सत्ता को प्राप्त करने के लिए उन्होंने हमेशा नैतिकता को आगे रखकर सत्ता प्राप्त करने के साथ-साथ उनके विचार दलित उत्थान के लिये ज्यादा अग्रसर रहें। जबकि कांशीराम की इस बात से आलोचना होती है क्योंकि उन्होंने हमेशाा राजनैतिक सत्ता को प्राप्त करने का विचार सामने रखा, न कि दलित वर्ग के उत्थान के लिये, जिससे कांशीराम हमेशा अपनी रणनीति को आगे रखा और नैतिकता पीछे रख कर दलितों के हितेशी बने रहे।[41]

कांशीराम राजनंद गाँव (मध्य प्रदेश) में एक पत्रिका को दिए साक्षात्कार में कहते हैं कि– "जातिवाद को हम बढ़ावा देते हैं। जातिवाद जब मजबूत होगा तभी राष्ट्र का हित

---

39 *कुआलालम्पुर में दिये गये भाषण,* 10 अक्टूबर, 1998.

40 मोहनदास नैमिशराव, *बहुजन समाज,* नीलकंठ प्रकाशन, दिल्ली, 2003 पृ. 156-159.

41 कंवल भारती, op.cit., (36), pp.10-12.

होगा।"[42] जबकि अम्बेडकर का विचार है कि यदि जाति को खत्म नहीं किया गया तो वह भारत को तबाह कर देगी। जिससे कांशीराम पर यह आरोप लगता है कि उन्होंने अम्बेडकर के विरूद्ध जातिवाद को बढ़ावा दिया। इस जातिवाद से राजनैतिक सत्ता तो प्राप्त हो सकती है लेकिन दलित वर्ग का सामाजिक उत्थान नहीं हो सकता। और सत्ता भी कुछ समय के लिये प्राप्त हो सकती है। ज्यादा समय तक टिकने वाली नहीं। अम्बेडकर ने तो दलित व अन्य पिछड़ी जातियों के साथ गठबंधन बनाने की बात कही थी न की जातिवाद की।[43]

अम्बेडकर ने कहा था कि राजनैतिक सत्ता ही दलितों के सर्वांगीण विकास की चाभी है। जो दलितों के उत्थान के सारे दरवाजे खोल सकती है। इस राजनैतिक सत्ता को प्राप्त करने के लिये दलित व अन्य पिछड़े वर्ग मिलकर एक गठबंधन बनाकर सत्ता प्राप्त कर सकते है। यानी की समान विचारधारा वाली पार्टी के साथ गठबंधन करने का आह्वान करते हुये सत्ता प्राप्त करने की बात करते हैं। जिससे ब्राह्मणवादी विचारधारा से छुटकारा प्राप्त किया जा सकता है और समान विचारधारा वाली वही पार्टियाँ हो सकती है जो समता, स्वतन्त्रता एवं बन्धुत्ता के मार्ग पर चलती हो, अम्बेडकर के अधूरे मिशन को कांशीराम ने आगे बढ़ाया लेकिन आगे चलकर उन्होंने ब्राह्मणवादी विचारधारा वाली पार्टियों के साथ अल्पमत गठबंधन करके सत्ता प्राप्त की। उत्तर प्रदेश में तीन बार मायावती मुख्यमन्त्री बनी। जिससे कांशीराम पर अवसरवादी राजनीति का आरोप लगा और उन्होंने अम्बेडकर की विचारधारा को पुन:परिभाषित करके गठबंधन किये।

डॉ. अम्बेडकर और कांशीराम की आलोचनात्मक समीक्षा

कांशीराम ने अम्बेडकर के मिशन को आगे बढ़ाने के लिये जो भी कार्य किये उनमें कुछ समानता के साथ-साथ असमानता भी दिखाई देती है।

कांशीराम ने अतीत से शिक्षा लेकर सबसे पहले बामसेफ के माध्यम से अपना एक राजनैतिक ढाँचा तैयार किया। उस राजनैतिक ढाँचे की कमी को डी.एस.4 ने पूरा किया और

---

42 *अमृत संदेश,* 27 मई 1993.

43 मोहनदास नैमिशराय, op.cit., (40), p.159.

बसपा की स्थापना की। लेकिन अम्बेडकर के मिशन को देखा जाये तो उन्होंने दलितों के उत्थान के लिये अनेक आन्दोलन व पत्र पत्रिकाओं का सहारा लिया उनमें प्रमुख कालाराम मन्दिर सत्याग्रह, महाड़ सत्याग्रह, बहिष्कृत आन्दोलन, ये सब आन्दोलन समता, स्वतन्त्रता, बन्धुता के लिये किये गये थे। इनको ही अम्बेडकर ने राजनैतिक रूप दिया था पर कांशीराम ने जो भी आन्दोलन किये उनमें सत्ता की लालसा दिखाई देती है। अम्बेडकर ने राजनीतिक पार्टियों के लिये कुछ सिद्धान्त बताये जैसे कि पार्टी का प्रबुद्ध नेतृत्व (2) पार्टी संगठन, (3) पार्टी के सिद्धान्त (4) पार्टी का कार्यक्रम एवं कार्यनीति, अम्बेडकर ने जो भी राजनैतिक पार्टियाँ बनाई थी, उन्होंने उनका लिखित संविधान, संगठित ढाँचा, कार्यक्रम तथा कार्यनीति का निर्धारण किया था जबकि कांशीराम ने बसपा की स्थापना की। उसका न तो कोई संविधान रहा है न संगठित ढाँचा और न ही कोई निश्चित कार्यक्रम एवं रणनीति।[44]

अभय दुबे लिखते हैं कि लगभग बीस वर्षों तक कांशीराम ने रिपब्लिकन पार्टी से लेकर दलित पैंथरों तक हर तरह के दलित आंदोलन से सम्बन्ध बनाए रखा। साथ ही स्वयं ने अपने संगठन भी बनाए। लेकिन शुरुआती चार वर्षों ने ही उन्हें स्थापित दलित नेताओं के प्रति निराशा की भावना से भर दिया। उनकी दिलचस्पी जल्दी ही रिपब्लिकन पार्टी में खत्म हो गई। उन्हें लगा कि ये तमाम दलित नेता ब्राह्मण वर्ग के चमचे हैं। आक्रोश में आकर उन्होंने "द चमचा एज : द एरा ऑफ स्टूजिस" नामक एक आक्रामक पुस्तक ही लिख डाली। इसके लिए कांशीराम ने पूना पैक्ट को जिम्मेदार माना[45] और 1982 में उन्होंने पूना पैक्ट धिक्कार दिवस मनाया और देश-भर से रैलियाँ निकालीं, जो पूना जाकर समाप्त हुई। यह प्रत्यक्ष रूप से 1932 में महात्मा गांधी के साथ अम्बेडकर द्वारा किए गए समझौते के खिलाफ प्रदर्शन था।[46]

हम कितना भी इतिहास के पृष्ठों को उलट-पुलटकर देखें हर एक दौर में परिवर्तन दिखाई देगा। और समाज में सकारात्मक तथा नकारात्मक परिस्थितियों की प्रक्रिया भी मिलेगी। जिनमें

---

44 डॉ. शूरा दारापुरी, "डॉ. अम्बेडकर और वर्तमान दलित राजनीति" *दलित लिबरेशन टुडे,* लखनऊ अगस्त, 1996, पृ. 16.

45 अभय कुमार दुबे, *आज के नेता/ आलोचनात्मक अध्ययन माला: कांशीराम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 41

46 कंवल भारती, op.cit., (36), p. 7.

जुझते हुए दलित आंदोलन, फैलते सिकुड़ते रहे हैं। राजनैतिक दलों के प्रचार-प्रसार के साथ उनके अन्दर ठहराव भी आता रहा है। यह बात अपने-आपमें सही है कि बसपा के पहले जैसी परिस्थितियाँ थीं वैसी रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया के गठन के पूर्व नहीं थी और रिपब्लिकन पार्टी के पहले जैसी परिस्थितियाँ रही वैसी शेडयूल्ड कास्ट फैडरेशन के पूर्व नहीं थी।

यह बात भी अपने-आपमें स्पष्ट है कि शेडयूल्ड कास्ट फैडरेशन और इंडिपेंडेंट लेवर पार्टी की स्थापना की पृष्ठभूमि में रही परिस्थितियों में भी असमानताएँ थीं। डॉ. अम्बेडकर ने इंडिपेंडेंट लेवर पार्टी तथा फेडरेशन(संघ) की स्थापना का समय 1936 और 1942 था पर इनके बीच गतिविधियों का सिलसिला दस वर्ष तक चला। उसके वाद फेडरेशन के नाम से एक नया राजनैतिक दल अस्तित्व में आया। लेकिन कुछ समय के बाद इसका भी समापन करके, एक नई पार्टी रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया की स्थापना की। इसी तरह अम्बेडकर ने 20 वर्ष में तीन राजनैतिक दलों को जन्म दिया। उनको लेकर समय-समय पर नये-नये प्रयोग भी किये। जिनमें कुछ असफलता के साथ-साथ सफलता भी प्राप्त हुई। इन सब प्रयोगों से एक बात निकल कर आती है कि उन्होंने अपने प्रयोगों से दलित राजनीति को एक निश्चित दिशा दी, उसका मार्ग स्पष्ट किया, उसे आवश्यक जुझारूपन दिया और उसको कई आयाम प्रकट किये। लेकिन कुछ समीक्षकों का मानना है कि वैसा कांशीराम नहीं कर सके उनकी वरीयता में सत्ता प्राप्त करना ही अधिक रहा।[47] जिससे कहा जा सकता है कि कांशीराम ने अपनी रणनीति को आगे रखकर नैतिकता को पीछे रखकर कार्य किये जबकि अम्बेडकर ने हर समय अपनी नैतिकता को आगे रखकर रणनीति को पीछे रखकर कार्य किये।

मोहनदास नैमिशराय कहते हैं कि शुरुआती दौर में देखा जाए जो कांशीराम के व्यक्तित्व साथ उनके संघर्ष की शैली परंपरा से हटकर थी जो दलितों को प्रभावित करने के साथ-साथ प्रेरित भी करती थी। उन्होंने देश भर में समय-समय पर दौरे किये। लोगों को संघर्ष करने के लिये प्रेरित भी किया। उन्हें बामसेफ के बेनर तले संगठित किया। संघर्ष करना भी सिखाया। लेकिन कुछ राजनैतिक विश्लेषकों का मानना है कि जैसे-जैसे बहुजन समाज पार्टी सत्ता के

---

47 मोहनदास नैमिशराय, *बहुजन समाज,* नीलकंठ प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ. 148.

नजदीक आती गयी वैसे-वैसे स्वयं बसपा के संस्थापक कांशीराम का दलित समाज और उसके स्वाभिमान से सम्बन्धित संघर्ष का दर्शन राजनैतिक विवशता में बदलता गया।[48] 15 अप्रैल 1996 को राजस्थान में एक बसपा प्रत्याशी के समर्थन में चुनावी सभा को सम्बोधित करते हुए कांशीराम ने कहा था कि पूरा मीडिया मनुवादी हाथों में हैं और मनुवादी अखबार उलटा सीधा लिखते हैं। मनुवादी मीडिया को मत पढ़ों तो इस पर विश्वास मत करो। उन्होंने बहुजन समाज को आह्वान किया वह अपना मीडिया बनाने की कोशिश करे, लेकिन उत्तर प्रदेश में बसपा की चार बार सरकार बनने पर भी मायावती अपना एक दलित मीडिया क्यों नहीं बना पायीं? जो उसकी आज असफलता का कारण माना जा सकता है जबकि अम्बेडकर ने उस युग में पत्र-पत्रिकाओं के क्षेत्र में अनेक संपादन व प्रकाशन के कार्य किये थे।[49]

यही नहीं उनका आगे कहना था कि ''उन्होंने डी.एस. 4 का निर्माण कल की लड़ाई के लिए कमजोरों को तैयार करने के लिए किया। उन्होंने अपनी एक रैली में कहा कि "मैं अपने प्रतिद्वंद्वियों को पूरी आजादी देता हूं कि वे बहुजन समाज को जितना बाँट सकें, बाँटे। लेकिन मेरा अधिकार है कि मैं उन्हें उनका हक दिलाने के लिए संगठित कहूँ।"[50]

इससे यह स्पष्ट होता है कि राजनैतिक सत्ता के प्रति उनकी सोच, पहले किसी भी समाज जाति या वर्गों को विभाजित होने दो या उनके बीच विभाजन की परिस्थितियाँ तैयार होने दो। बाद में उस बिखराव को समेटने के लिये राजनैतिक मुहिम आरंभ की जाए। उनकी सोच यही थी जिसका उन्होंने समय-समय पर प्रयोग किया है। व्यक्ति हो या समूह फिर भले ही जाति, वह विवश होकर उनके पास आए या वे उसे विवश कर दें कि उनके बिना उसका काम ही न चल सके। इसलिए यह सीधे-सीधे कहा जा सकता है कि अगर उनका कोई दर्शन था तो सत्ता प्राप्ति में ही निहित दिखाई देता है।

सत्ता प्राप्ति के मामले में कांशीराम अम्बेडकर से थोड़ा अलग दिखाई देते हैं। अम्बेडकर ने जिसे राजनीति की चाबी कहा था वह थी राजसत्ता। अम्बेडकर ने राजसत्ता तक पहुँचने के लिये

---

48 Ibid., p.162.

49 *हम दलित,* अक्टूबर 1999,पृ. 16.

50 Ibid., p. 55.

समता, स्वतन्त्रता, बन्धुता को साथ रखते हुये अपने तीन सिद्धान्त, 'शिक्षित बनो, संघर्ष करो, संगठित रहो' के बल पर आगे बढ़े और दूसरा कार्य उनका सत्ता के लिए शक्ति सन्तुलन अपने हाथ में रखें। पर कांशीराम के लिए इन कार्यों पर चलने का क्रम विरोधाभास दिखाई देता है।[51]

निष्कर्ष

कांशीराम ने अपनी बहुजन थीसिस फुले और अम्बेडकर के विचारों से निकाली। केवल दलितों को लेकर राजनीति करने से सम्बंधित अम्बेडकर के प्रयोगों की विफलता और रिपब्लिकन पार्टी की समाप्ति के उदाहरण कांशीराम के समक्ष थे। इसी कारण कांशीराम ने राजनीतिक प्रयासों में कई बार अम्बेडकर के मिशन से अलग हटकर उनका मिशन दिखाई देता है। जिसके कारण बहुत से दलित उनके विचारों की आलोचना करते हैं और कहते हैं कि कांशीराम ने अम्बेडकर के बारे में पूरी तरह से नहीं पढ़ा है या समझा नहीं है। जिससे उनकी विचारधारा से हट कर कार्य किये।

उनको कुछ सफलता के साथ-साथ असफलता भी प्राप्त हुई पर कांशीराम का दलित उत्थान में काफी योगदान रहा है। देखा जाये तो उनकी तीन बड़ी उपलब्धियाँ दिखाई देती है। (1) उन्होंने दलितों के साथ अन्य पिछड़े वर्ग और अल्पसंख्यक वर्गों को जोड़ने का कार्य किया। इन वर्गों को संगठित करके राजनैतिक गठबंधन भी तैयार किये। (2) उन्होंने दलितों के उत्थान के लिये वोट का प्रयोग कैसे किया जाये, उसकी प्रेरणा दी। (3) समाज और राजनीति के क्षेत्र में ब्राह्मणवादी विचारधारा के खिलाफ एक निर्णायक लड़ाई का मोर्चा खोला। जिसका मतलब था भागीदारी, जिसके तहत सवर्ण दलों के लिये चिंताए बढ़ाई, जोकि विरोधी दल के साथ-साथ सत्ता प्राप्त करके दलितों के उत्थान में वह काफी हद तक प्रेरणा के स्रोत बनें।

कांशीराम की राजनीति का रिस्ता सामाजिक भेदभाव और आर्थिक शोषण के शिकारों से रहा है। बामसेफ और डी.एस.4 के दलित उत्थान के लिये उन्होंने दलित जाति को केन्द्र में रखकर अन्य पिछड़ी जातियों व अल्पसंख्यक वर्गों से जोड़ने का प्रयास किया। इसी के साथ कांशीराम ने जाति चेतना का राजनीतिकरण करके उनको ब्राह्मणवादी विचारधारा वाली पार्टियों

---

[51] Ibid., p. 156.

को इतने पंगु बना दिया था। वह जाति के नाम पर चुनाव ही नहीं जीत सकती। जिसका लाभ कांशीराम ने तीन बार उठाया। इसी के साथ-साथ कांशीराम ने अपने मिशन को आगे बढ़ाने के लिये अपनी विचारधारा को किसी विचारधारा से प्रेरित नहीं किया। बल्कि शुरूआती स्तर पर बसपा की विचारधारा दलित उत्थान के पक्ष में प्रतीत होती है।

कांशीराम का विचार सामने आता है कि गठबंधन बनाने के लिये बसपा किसी खास विचारधारा से प्रेरित नहीं है बल्कि शुरूआती स्तर पर बसपा की विचारधारा मात्र दलित सशक्तिकरण रही है। चूँकि यदि बसपा किसी भी तरीके से, किसी भी स्वरूप के गठबंधन से सत्ता पर काबिज हो जाती है तो इससे बसपा का जनाधार मजबूत होकर आधार ग्रहण करेगा।